**ओ३म्**

**‘ऋषि दयानन्द का पौराणिक तीर्थ स्थानों विषयक**

**ज्ञान अनुमान वा अनुभव पर आधारित’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ऋषि दयानन्द को वेदों व सम्पूर्ण वैदिक साहित्य का तलस्पर्शी ज्ञान था। वह उच्च कोटि के सफल योगी थे और अनुमानतः कह सकते हैं कि उन्होंने सन् 1860 में गुरु विरजानन्द जी के पास मथुरा पहुंचने से पूर्व ही योगाभ्यास से ईश्वर का साक्षात्कार कर लिया था। उसके बाद देहत्याग करने तक वह योगाभ्यास करते रहे थे और कुछ ही समय में उनकी समाधि लग जाती थी। इसका उल्लेख स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपनी आत्मकथा **‘कल्याण मार्ग के पथिक’** में किया है व बाद की कुछ घटनायें भी इसका संकेत करती हैं। स्वामी दयानन्द का व्यक्तित्व भी अत्यन्त आकर्षक व प्रभावशाली था। वह ज्ञान व व्यक्तित्व की दृष्टि से ऐसे धर्मोपेदेष्टा थे जैसा सम्भवतः महाभारत काल के बाद अन्य कोई नहीं हुआ। उनके प्रायः सभी ग्रन्थ ज्ञान का भण्डार हैं जिन्हें पढ़कर नाना विषयों का लाभकारी ज्ञान प्राप्त होता है। सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि उनके प्रमुख ग्रन्थ हैं।

ऋषि दयानन्द ने अपने प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में आर्यावर्तीय मत-मतान्तरों की मान्यताओं का खण्डन व मण्डन किया है। इसके अन्तर्गत स्वामी दयानन्द जी ने अनेक पौराणिक तीर्थों का वर्णन कर जो वर्णन किया है उससे यह शंका होती है कि सम्भव है कि स्वामी जी उन स्थानों पर गये होंगे? इसका कारण यह है कि मनुष्य कोई भी ज्ञान सुनकर, पढ़कर व स्वयं के प्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त करता है। हम जिन पौराणिक तीर्थों की बात कर रहे हैं उनमें गया में श्राद्ध खण्डन, काली-कामाक्षा-चमत्कार खण्डन, लाटभैरवादि-चमत्कार-खण्डन, जगन्नाथ के चमत्कार का खण्डन, रामेश्वर-लिंग-चमत्कार खण्डन, कालियाकान्त-चमत्कार-खण्डन, डाकोर-चमत्कार-खण्डन, सोमनाथ और महमूद गजनवी, द्वारिका का रणछोड़, अमृतसर-अमरनाथदि का खण्डन आदि प्रमुख हैं। काली-कामाक्षा के चमत्कार का जो खण्डन ऋषि दयानन्द ने किया है उसे प्रस्तुत करते हैं। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में प्रश्न प्रस्तुत किया है कि देखो, कलकत्ते की काली और कामाक्षा (गुवाहाटी-असम) आदि देवी को लाखों मनुष्य मानते हैं। क्या यह चमत्कार नहीं है? इसका उत्तर देते हुए वह कहते हैं कि कुछ भी नहीं। ये अन्धे लोग भेड़ के तुल्य एक के पीछे दूसरे चलते हैं। कूप खाड़े में गिरते हैं, हठ नहीं सकते। वैसे ही एक मूर्ख के पीछे दूसरे चलकर मूर्तिपूजारूप गढ़े में फंसकर दुःख पाते हैं। इस व अन्य खण्डनात्मक वर्णनों को पढ़कर लगता है कि हो सकता है कि अपने जीवन काल में कभी ऋषि वहां गये हों और उन्होंने वहां की सारी पोपलीला को एक समीक्षक व दर्शक के रूप में देखा हो और निश्चय किया हो कि यह सब बातें और विश्वास आदि असत्य और आधारहीन हैं।

रामेश्वर के खण्डन प्रसंग में ऋषि ने लिखा है कि (रामेश्वर के) उस मन्दिर में भी दिन में अन्धेरा रहता है। दीपक रात-दिन जला करते हैं। जब जल की धारा छोड़ते हैं तब उस जल में बिजुली के समान दीपक का प्रतिबिम्ब चलकता है, और कुछ भी नहीं। न पाषाण घटे न बढ़े, जितना का उतना रहता है। ऐसी लीला करके विचारे निर्बुद्धियों को ठगते हैं। स्वामी जी ने सभी प्रसंगों में कहीं यह नहीं कहा कि यह बातें उन्होंने सुनकर वा पुस्तक आदि में पढ़कर या स्वयं वहां जाकर अनुभव कर देखी हैं और उसके आधार पर वह खण्डन कर रहे हैं। अतः हो सकता है कि शायद वह कभी इन प्रसिद्ध सभी व इनमें से कुछ स्थानों पर गये हों और उन्होंने यह ज्ञान प्रत्यक्ष के आधार पर प्राप्त किया हो। क्योंकि ऋषि दयानन्द के जीवन में इन स्थानों के भ्रमण का विवरण नहीं आया है, अतः किसी भी पाठक को शंका हो सकती है। हम आर्यसमाजों के विद्वानों से निवेदन करते हैं कि वह अपनी ऊहा से प्रकाश डाले कि इन वर्णनों का ज्ञान ऋषि दयानन्द जी को कैसे हुआ होगा?

जहां तक यह सम्भावना कि पुस्तकों से उन्हें ज्ञान हुआ होगा, तो ऐसा वर्णन किस ग्रन्थ में रहा होगा, इसका अनुमान नहीं किया जा सकता। ऐसा होना व न होना दोनों सम्भव है। स्वामी विरजानन्द जी के पास मथुरा आने से पूर्व उनके किसी साथी व सहयोगी ने हो सकता है कि इस विषय में उन्हें कुछ बताया होगा, यह भी निश्चय से नहीं कहा जा सकता। वह इस कारण कि तब स्वामी जी को शायद यह बातें जानने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी थी। स्वामी विरजानन्द जी की पाठशाला से शिक्षा समाप्त करने के बाद तो वह प्रचार में निकल आये थे और खण्डन-मण्डन आरम्भ कर दिया था। बहुत से पौराणिक विचारों के बुद्धिमान व विवेकशील व्यक्ति उनके अनुयायी बने थे। हो सकता है कि उनमें से कुछ लोगों ने ऐसी जानकारियां उन्हें दी हों। इसका भी होना व न होना दोनों सम्भव है। सत्यार्थप्रकाश लिखने की पृष्ठ भूमि से ज्ञात होता है कि राजा जयकृष्णदास जी से प्रस्ताव मिलने पर उसे स्वीकार कर स्वामी जी ने साढ़े तीन महीने में ही यह ग्रन्थ लिख डाला था। तब शायद सामग्री एकत्र करने का समय उनके पास नहीं था। उन्होंने जो भी लिखा वह अपनी स्मृति के आधार पर ही लिखा, यही स्वीकार करना पड़ता है। हां सत्यार्थप्रकाश का दूसरा संशोधित संस्करण तैयार करने में उन्हें पर्याप्त समय मिला था। इस नये संस्करण में स्वामी जी ने कई प्रकरणों को संशोधित किया और कुछ नई बातें भी कही। यहां भी स्थिति स्पष्ट नहीं होती। ऐसा भी हो सकता है कि सन् 1857 की क्रान्ति की उथल पुथल के दिनों व सन् 1860 में स्वामी विरजानन्द जी के पास मथुरा पहुंचने से पहले वह ऐसे स्थानों पर भ्रमण पर गये हों और वहां उन्होंने स्वयं प्रत्यक्ष रूप से इन सब पौराणिक कृत्यों को देखा और जाना हो। हम यह समझते हैं कि किसी को भी अनावश्यक शंका आदि नहीं करनी चाहिये। जो सामने प्रत्यक्ष उपलब्ध है उसी को स्वीकार करना चाहिये। इसके साथ ही यदि मन में शंका हो तो उसका निवारण यदि हो सकता हो तो कर लेना उचित ही होता है। इसी दृष्टि से हमने यह पंक्तियां लिखी हैं। हमारे विद्वानों के भी इस विषय में अपने-अपने विचार हों सकते हैं। हो सकता है कि वह यह मानते हो कि ऋषि ने यह सारे वर्णन सुनकर व पढ़कर अथवा अपने योग आधारित विवेक ज्ञान से किये हों। अतः हम विद्वानों की सेवा में निवेदन करते हैं कि वह हमारी शंका का समाधान करने की कृपा करें। इससे अन्यों को भी लाभ होगा और यदा कदा मन में उठने वाली यह शंका दूर हो सकेगी। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**